मजदूरी का सिद्धान्त

Dr. Amitendra Singh
Economics Department
Pt.DDUGovt. Girls PG College ,RJPM Lucknow
E mail-amitendra82@gmail.com.in

मजदूरी का सिद्धान्त

- मजदूरी का लौह, प्राकृतिक अथवा जीवन-निर्वाह-सिद्धान्त
- मजदूरी के रहन सहन का सिद्धान्त
- मजदूरी कोष का सिद्धान्त
- अवशेष या अवशिष्ट स्वत्व सिद्धान्त
- मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त
- पूर्ण प्रतियोगी बाजार से मजदूरी निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त
- अपूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी का निर्धारण

मजदूरी का लौह, प्राकृतिक अथवा जीवन-निर्वाह-सिद्धान्त

- इस सिद्धान्त का प्रतिपादन 18वीं तथा 19वीं शताब्दी के मध्य एक प्रकृतिवादी अर्थशास्त्री टारगॉट ने किया। मजदूरी-निर्धारण के इस सिद्धान्त का जब प्रतिपादन किया गया उस समय यूरोप की जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही थी और उत्पादन उसकी तुलना में अत्यन्त ही कम था। इस सिद्धान्त के अनुसार मजदूरी निर्धारण का एक प्राकृतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार मजदूरी जीवन-निर्वाह के बराबर ही रहती है।
- **मान्यतायें -** जनसंख्या में अत्यन्त ही तेजी के साथ वृद्धि होती है। इस मान्यता का आधार माल्थस का जनसंख्या-सिद्धान्त है। यह है कि क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम के क्रियाशीलन के कारण उत्पादन में कमी, फलस्वरूप मूल्यों में बढ़ने की प्रवृत्ति दिखाई देगी।
- **व्याख्या:-** रिकार्डो ने इस सिद्धान्त की व्याख्या करते समय दो प्रकार की मजदूरी की दरों की चर्चा की-प्राकृतिक दर तथा बाजार-दर। रिकार्डो के अनुसार श्रम की प्राकृतिक दर वह कीमत है जो

- रिकार्डो ने यह विश्वास किया कि मजदूर का मूल्य (मजदूरी) जिसे भोजन तथा आवश्यक आवश्यकता के रूप में व्यक्त किया जाता है। प्रत्येक अवस्था में स्थिर रहता है। इसीलिए जर्मन अर्थशास्त्री लासेल ने इस सिद्धान्त को मजदूरी का लौह सिद्धान्त कहा।
- मजदूरी का जीवन-निर्वाह सिद्धान्त एक ओर तो आशावादी है दूसरी ओर निराशावादी है। आशावादी होने का कारण यह है कि इस सिद्धान्त से यह स्पष्ट मालूम होता है कि मजदूरी जीवन-निर्वाह के न्यूनतम स्तर से कभी नीचे नहीं होगी। दूसरी ओर निराशावादी इसलिए है क्योंकि यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से कहता है कि मजदूरी जीवन-निर्वाह के स्तर से कभी ऊपर नहीं होगी। इसका तात्पर्य यह है कि श्रमिकों का जीवन-स्तर तथा उनकी कार्यक्षमता कभी उठेगी नहीं।
- **आलोचनाएँ:-**
- 1.आलोचना यह सिद्धान्त माल्थस के जनसंख्या-सिद्धान्त पर आधारित है जो स्वयं एक त्रुटिपूर्ण सिद्धान्त है। जीवन-निर्वाह का सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि जैसे-जैसे मजदूरी बढ़ती जायेगी, श्रमिकों में सन्तानोत्पत्ति की प्रवृत्ति बढ़ेगी। पर व्यावहारिक जीवन की दृष्टि से यह ठीक नहीं है। मजदूरी बढ़ने से जीवन-स्तर ऊँचा हो सकता है, जन्म दर बढ़ने के स्थान पर अधिक आनन्द तथा ऊँचे जीवन-स्तर के सुख को प्राप्त करने के लिए जन्म-दर कम भी हो सकती है।
- 2.मजदूरी में निर्वाह स्तर के बराबर होने के कारण भिन्नता नहीं होगी, जबकि वास्तविक जीवन में मजदूरी में भिन्नता पायी जाती है।
- 3.इस सिद्धान्त में मजदूर की कार्य क्षमता की वृद्धि पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। फलस्वरूप कार्यक्षमता निरन्तर गिरती जायेगी।
- 4.यह सिद्धान्त पूर्ति पक्ष पर ध्यान देने के कारण, एकपक्षीय है।
- उपर्युक्त दोषों के कारण ही मजदूरी-निर्धारण के इस सिद्धान्त का प्रयोग उन्◌ा◌ीसवीं शताब्दी के बीच से ही छोड़ दिया गया। पर यह कहना गलत नहीं होगा कि समाजवादियों ने रिकार्डो के इसी सिद्धान्त को आधार मानकर यह प्रतिपादित किया कि श्रमिकों को केवल जीवन-निर्वाह के बराबर पारितोषिक मिलता है। जबकि उनका उत्पादन में योगदान इससे अधिक रहता है। इस प्रकार श्रमिकों का शोषण होता है।

मजदूरी के रहन सहन का सिद्धान्त

- मजदूरी के जीवन-निर्वाह-सिद्धान्त की कटु आलोचना इसके निराशावादी दृष्टिकोण के कारण की गई तथा यह भी कहा गया कि इस सिद्धान्त में मजूदूरी एवं कार्य-क्षमता के बीच सम्बन्ध स्थापित नहीं किया गया। इन्हीं कमियों को दूर करने के लिये इस सिद्धान्त का सुधरा हुआ रूप मज़दूरी के रहन-सहन-स्तर के सिद्धान्त के रूप में व्यक्त किया गया। रहन-सहन सिद्धान्त का प्रतिपादन टारेन्स ने किया । इसे मजदूरी का सुनहरा सिद्धान्त भी कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार मजदूरी जीवन निर्वाह के बराबर नहीं, बल्कि रहन-सहन के स्तर के बराबर होनी चाहिए। इस सिद्धान्त के समर्थकों का यह मत रहा है कि श्रमिकों को यदि रहन-सहन के स्तर के बराबर मजदूरी मिल जायें तो उसे वे वस्तुयें उपलब्ध हो जायेंगी जिनसे उसकी कार्यक्षमता भी बढ़ सकेगी। वह अपने भविष्य के लिए कुछ बचा भी सकेगा। इस दृष्टिकोण से मजदूरी का यह सिद्धान्त जीवन-निर्वाह-सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक विवेकपूर्ण तथा उत्तम है।

- 1.इस सिद्धान्त की सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि रहन-सहन के स्तर का ठीक से पता लगाना अत्यन्त ही कठिन है। रहन-सहन का स्तर स्थिर नहीं रहता है।
- 2.इतना ही नहीं यह भी नहीं कहा जा सकता है कि मज़दूरी के कारण रहन-सहन के स्तर में वृद्धि होती है अथवा रहन-सहन के स्तर के वृद्धि के कारण मजदूरी में वृद्धि होती है।
- 3.जीवन निर्वाह-सिद्धान्त की ही भाँति यह सिद्धान्त भी पूर्तिपक्ष पर ही आधारित है, इसमें माँग-पक्ष पर ध्यान नहीं दिया गया है।
- 4.ऊँची मजदूरी के ऊपर केवल जीवन-स्तर का ही प्रभाव नहीं पड़ता है बल्कि यह अन्य कारणों से भी प्रभावित होता है।
- 5.व्यवहारिक जीवन में मजदूरी की दर समान नहीं होतीं, बल्कि उनमें भिन्नता पायी जाती है।

मजदूरी कोष का सिद्धान्त

- मजदूरी-निर्धारण के लिए मजदूरी-कोष-सिद्धान्त की व्याख्या सिद्धान्त के रूप में जॉन स्टुअर्ट मिल ने 1848 में अपनी पुस्तक Principles of Political Economy में की पर इस सिद्धान्त की झलक एडमस्मिथ के विचारों में भी मिलती है। एडमस्मिथ ने यह कहा कि मजदूरी देने के लिए उत्पादक के पास एक अलग कोष रहता है। एडमस्मिथ के इस कथन को इस सिद्धान्त का बीज मानना गलत नहीं होगा। पर इसके आधार पर एडमस्मिथ को इस सिद्धान्त का प्रतिपादक मानना गलत होगा तत्पश्चात् मिल, माल्थस, सीनियर, रिकार्डो आदि ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है।
- मिल के अनुसार "मजदूरी श्रम की माँग एवं पूर्ति पर निर्भर करती है। या इसे प्रायः इस रूप में भी व्यक्त किया जाता है कि मजदूरी जनसंख्या तथा पूँजी के सम्बन्ध पर निर्भर करती है।" मिल का जनसंख्या से अभिप्राय उस समूह से था जो मजदूरी के बदले अपनी सेवाओं को देने के लिए तत्पर हो तथा पूँजी का भी प्रयोग मिल ने विशिष्ट अर्थ में किया। उनके अनुसार पूँजी का अर्थ धन के उस भाग से था जिसका प्रयोग उत्पादक श्रमिक की मजदूरी तथा उसी से सम्बद्ध कार्यों से भुगतान के लिये करता है। इस प्रकार मजदूरी उत्पादक द्वारा निश्चित एक स्थिर राशि होगी जिसमें से वह मजदूरों को भुगतान करता है। इसे मिल ने मजदूरी कोष कहा। इस प्रकार मजदूरी की दर मजदूरी कोष तथा जनसंख्या के उस भाग के सम्बन्ध में निर्भर करेगी जिस मजदूरी दर पर श्रमिक कार्य करने के लिये तैयार हैं। यदि मजदूरों की संख्या बढ जाये तो प्रति मजदूर मजदूरी ... जायेगी तथा

- (1)वाकर , लॉन्ज और थॉर्नटन मजदूरी का भुगतान केवल पूँजी से नहीं किया जाता, जैसा इस सिद्धान्त में प्रतिपादित किया गया, बल्कि उसका भुगतान चालू आय में से भी किया जाता है। इतना ही नहीं श्रमिक की माँग उपभोक्ताओं द्वारा निश्चित की जाती है।
- (2)यह सिद्धान्त यह तो बताता है कि औसत मजदूरी का ज्ञान मजदूरी-कोष को कुल श्रमिकों की संख्या से भाग देकर किया जा सकता है पर यह सिद्धान्त इस बात का उल्लेख नहीं करता है कि मजदूरी कोष का निर्माण कैसे होता है।
- (3)मिल ने यह कहा कि मजदूरी का निर्धारण मांग एवं पूर्ति द्वारा होता है। पर व्याख्या तथा विश्लेषण में उनका यह कथन सही नहीं उतरता है। मिल के अनुसार श्रम की माँग पूँजी द्वारा निर्धारित होती है पर यह पूँजी स्थिर है। यदि पूँजी पर आधारित मजदूरी कोष स्थिर हो तो यह कहना भ्रामक होगा कि मजदूरी-निर्धारण में माँग अथवा पूँजी का प्रभाव पड़ा।
- (4)क्रमागत उत्पादन-वृद्धि नियम के लागू होने पर मिल द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त सही नहीं उतरता। कारण यह है कि मिल ने यह कहा कि यदि श्रमिकों की संख्या एवं मजदूरी कोष स्थिर रहे, तो मजदूरी की वृद्धि के कारण लाभ में कमी होगी पर ऐसी बात उस समय नहीं होगी जिस समय उद्योग में क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि नियम लागू हो। ऐसी स्थिति में मजदूरी के साथ-साथ लाभ में वृद्धि होगी।
- (5)इस सिद्धान्त में यह मान लिया गया है कि लाभ के कम होने पर पूँजी कम हो जायेगी, फलस्वरूप मजदूरी में कमी होगी। पर यह व्यावहारिक नहीं है। ... में ... कल्पना

अवशेष या अवशिष्ट स्वत्व सिद्धान्त

- मिल के मजदूरी-कोष-सिद्धान्त की यह आलोचना की गई कि मजदूरी तथा श्रम की कार्यक्षमता में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। इस कमी को दूर करने के लिये अवशिष्ट स्वत्व-सिद्धान्त को प्रस्तुत किया गया। सबसे पहले जेवेन्स ने 1862 में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया पर बाद में अमेरिकन अर्थशास्त्री वाकर ने इस सिद्धान्त का स्पष्टीकरण किया और आजकल यह सिद्धान्त उन्हीं के नाम से जाना जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार मजदूरी कुल उत्पादन का वह भाग है जो उत्पादन के अन्य साधनों को उनके पारिश्रमिक देने के बाद शेष रह जाता है। जेवेन्स के शब्दों में 'श्रमिक की मजदूरी अन्त में उसके उत्पादन के ही अनुरूप होती है। कुल उत्पादन में से लगान, कर तथा पूंजी के भुगतान (ब्याज) को घटा देने पर जो शेष बचता है वहीं उसका उत्पादन होता है।' सिद्धान्त का स्पष्टीकरण करते समय वाकर ने कहा 'मजदूरी कुल उत्पादन में से लगान, ब्याज तथा लाभ को घटाने पर शेष के बराबर होती है।' उदाहरण के लिये यदि 'क' 'ख' तथा 'ग' भूमि के तीन टुकड़े हो तथा प्रत्येक से क्रमशः 250 रू0, 200 रू0 तथा 150 रू0 की आय प्राप्त हो तो कुल आय 600 रूपया होगी। इसमें से लगान (सीमान्त भूमि के आय के आधार पर) 600 - 3 x 150 = 600 - 450 = 150 रू0 होगा। यदि ब्याज की मात्रा 100 रू0 मान लिया जाय तो 600-(100 ब्याज + 150 लगान = 250) = 350 रू0 शेष बचेगा। इसमें से यदि लाभ जो एक प्रकार का लगान है, 150 रूपया मान लिया जाय तो 200 रूपया मजदूरी का भाग होगा।
- इस सिद्धान्त की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि यह सिद्धान्त यह मानता है कि यदि श्रमिकों की कार्य-कुशलता में वृद्धि हो जाये तो उससे उत्पादन में वृद्धि होगी, फलस्वरूप श्रमिकों को अधिक मजदूरी मिलेगी। पर यह सिद्धान्त दोषपूर्ण है। प्रथम, इस सिद्धान्त में श्रम की मांग एवं पूर्ति पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। दूसरी बात यह है कि वास्तविक जीवन में अवशेष भाग तो साहसी को लाभ के रूप में मिलता है, मजदूरी अवशिष्ट नहीं होती है। तीसरी बात, इस सिद्धान्त के अनुसार श्रम-संघ तथा मजदूरी के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण नहीं मिलता है। व्यवहार में ऐसा देखा गया है कि श्रमिक-संघ मजदूरी को बढ़वाने में सफल हो जाते हैं।

मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त

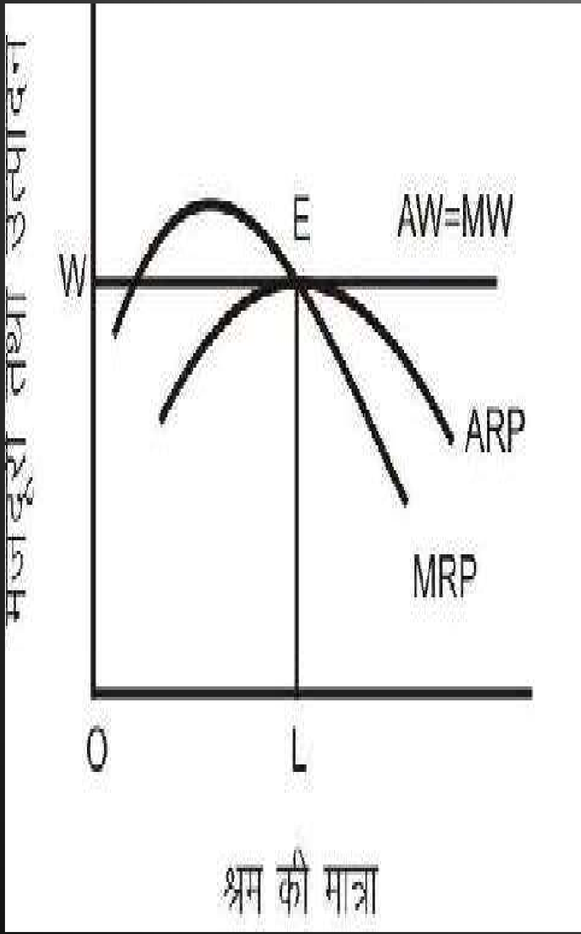

- आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने मजदूरी के सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त की अनेक आलोचनायें की हैं। जो इस प्रकार हैं-
- 1-यह सिद्धान्त कुछ काल्पनिक मान्यताओं पर आधारित है जो स्थैतिक अर्थव्यवस्था में सत्य होती हैं। ये मान्यतायें प्रमुख रूप से निम्न हैं- श्रम-बाजार में पूर्ण प्रतियोगिता, श्रम की पूर्ण गतिशीलता, श्रम की विभिन्न इकाइयों में समरूपता आदि। इस प्रकार एक प्रवैगिक अर्थव्यवस्था में यह सिद्धान्त लागू नहीं होता है।
- 2-मजदूरी का सीमान्त उत्पादकता सिद्धान्त एक पक्षीय है। यह केवल माँग-पक्ष पर ध्यान देता है, पूर्ति-पक्ष की ओर ध्यान नहीं देता है। मारिस डॉव के अनुसार "इसकी अपूर्णता का एक कारण यह है कि इसमें कहीं पर यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि श्रम की पूर्ति किस प्रकार निर्धारित होती है । इस सिद्धान्त में श्रम का शुद्ध सीमान्त उत्पादन ज्ञात करने के लिए उसकी कुछ निश्चित मात्रा मान लेनी पड़ती है।"
- 3-इस सिद्धान्त में यह मान लिया गया है कि सभी श्रमिक एक समान हैं तथा उनकी उत्पादकता में कोई अन्तर नहीं है पर यह एक सैद्धान्तिक सत्य हो सकता है व्यवहारिक सत्य नहीं।
- 4-श्रम की सीमान्त उत्पादकता ज्ञात करना सरल नहीं होता है। श्रम की सीमान्त उत्पादकता तभी ज्ञात की जा सकती है जब उत्पत्ति के अन्य साधन स्थिर हों पर कुछ ऐसे भी उत्पादन के कार्य हैं जिनमें उत्पादन के सभी साधनों को एक निश्चित अनुपात में ही लगाना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में श्रम की सीमान्त उत्पादकता नहीं ज्ञात की जा सकती ।

पूर्ण प्रतियोगी बाजार से मजदूरी निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त

- वस्तु कीमत की भांति श्रम की कीमत अर्थात् मजदूरी भी श्रम की मांग और श्रम की पूर्ति द्वारा निर्धारित होती हैं। श्रम की कुछ विशेषताओं के कारण मजदूरी का निर्धारण करने के लिए एक अलग सिद्धान्त की आवश्यकता पड़ती है। पूर्ण प्रतियोगी बाजार में एक उद्योग के अन्तर्गत मजदूरी उस बिन्दु पर निर्धारित होती है जहाँ श्रमिकों की पूर्ति रेखा श्रमिकों की मांग रेखा को काटती है।

पूर्ण प्रतियोगी बाजार से मजदूरी निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त

- **श्रम की पूर्ति :-** श्रम की पूर्ति से अभिप्राय यह है कि एक दिये हुए श्रमिक द्वारा विभिन्न मजदूरी दरों पर प्रस्तुत किये जाने वाले कार्य घण्टों की संख्या। श्रम कार्य घण्टों एवं मजदूरी दर में सामान्यतः एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध पाया जाता है। ऊँची मजदूरी दर पर अधिक श्रमिक कार्य करने के लिए उपलब्ध होंगे तथा कम मजदूरी दर पर श्रमिकों की कम संख्या कार्य के लिए उपलब्ध होगी। **(1)यदि व्यवसायिक गतिशीलता** : श्रमिकों के मध्य अधिक होगी, जो उद्योग विशेष का श्रम पूर्ति वक्र अधिक लोचदार हो जायेगा, क्योंकि एक मजदूरी दर दूसरे उद्योगों के श्रमिकों को इस उद्योग विशेष में आने के लिए प्रोत्साहित करेगी। व्यवसायिक गतिशीलता निम्नलिखित वातों पर निर्भर करती है:
- **(a)श्रम की प्रकृति** : शिक्षित अथवा अशिक्षित। अशिक्षित श्रमिकों के लिए उद्योगों के मध्य गतिशीलता अधिक होती है, जबकि शिक्षित श्रम अधिक गतिशील नहीं हो पाता।
- **(b)व्यवसाय परिवर्तन** में होने वाली स्थानान्तरण लागत ऊंची स्थानान्तरण लागत गतिशीलता को रोकती है।
- **(c)अन्य उद्योगों में मजदूरी दर:** यदि अन्य उद्योगों में उद्योग विशेष की अपेक्षा ऊंची मजदूरी दर और व्यवसाय सुर… तो श्रमिक उद्योग … अन्यत्र … लगेंगे … और

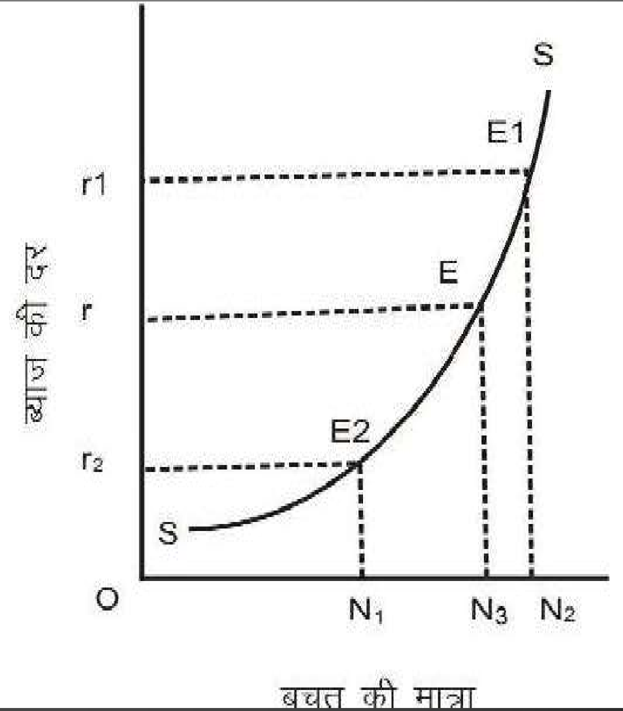

पूर्ण प्रतियोगी बाजार से मजदूरी निर्धारण का आधुनिक सिद्धान्त

- **श्रम की माँग :-** श्रम की माँग उद्यमियों द्वारा किसी वस्तु के उत्पादन के लिए की जाती है। जैसा कि हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि श्रम की माँग अप्रत्यक्ष अथवा व्युत्पन्न मांग होती है क्योंकि श्रम की मांग उस वस्तु की मांग पर निर्भर करती है जिसके उत्पादन में उस श्रम का प्रयोग किया जाता है। उद्यमी किस बिन्दु तक श्रमिक की माँग करेगा यह इस बात पर निर्भर करेगा कि उस
- श्रम की माँग कुछ मुख्य बातों पर निर्भर करती है जो निम्नलिखित हैं-
- श्रम की माँग श्रम की उत्पादकता पर निर्भर करती है।
- श्रम की माँग व्युत्पन्न माँग होने के कारण उत्पादित वस्तु की माँग पर निर्भर करती है।
- श्रम की माँग उद्योग के द्वारा अपनायी गयी उत्पादन की तकनीक एवं तकनीकी दशाओं पर भी निर्भर करती है। यदि फर्म पूंजी गहन रीति का प्रयोग करती हैं तो ऐसे उद्योग में श्रम की कम मांग होगी, इसके विपरीत, यदि फर्म श्रम गहन रीति का प्रयोग करती है तो ऐसे उद्योग में श्रम की माँग अपेक्षाकृत अधिक होगी।
- श्रम की माँग पूँजीगत साधनों की कीमतों पर भी निर्भर करती है क्योंकि श्रम और पूंजी में स्थानापन्नता ... उपस्थित

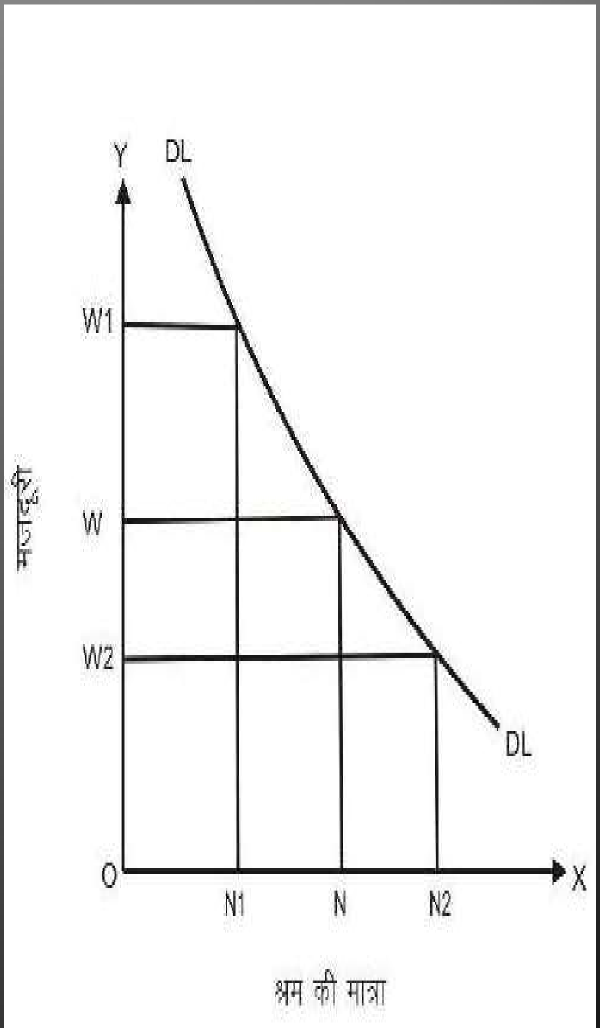

मजदूरी निर्धारण-मांग-पूर्ति सन्तुलन

- **सन्तुलन बिन्दु E पर**
- **श्रम की मांग = ON**
- **श्रम की पूर्ति = ON तथा, मजदूरी पर = OW**
- पूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी निर्धारण एक स्वतः प्रक्रिया है। यदि मजदूरी दर पर aW_1 श्रम की मांग तथा aW_1 श्रम की पूर्ति है। दूसरे शब्दों में OW_1 मजदूरी दर पर ab अतिरेक श्रम पूर्ति उपस्थिति होती है। यह अतिरिक्त पूर्ति अथवा बेरोजगारी श्रमिकों के मध्य स्पर्धा उत्पन्न करेगी जिसके कारण मजदूरी दर में कमी होनी आरम्भ होगी। मजदूरी में कमी की यह प्रक्रिया तब तक जारी रहेगी जब तक श्रम की मांग तथा श्रम की पूर्ति पुनः बिन्दु E पर बराबर न हो जाये।
- इसके विपरीत, यदि किसी कारणवश श्रम की मज़दूरी दर OW_2 हो जाती है तो इस दशा में cW_2 श्रम की पूर्ति और dW_2 श्रम की मांग प्राप्त होती है अर्थात OW_2 मजदूरी दर पर cd अतिरेक श्रम मांग प्राप्त होती है। श्रमिकों की यह अतिरिक्त मांग मजदूरी दर को तब तक बढ़ायेगी जब तक [illegible] बिन्दु E पर मांग और पूर्ति सन्तुलन में न [illegible]।

संक्षेप में

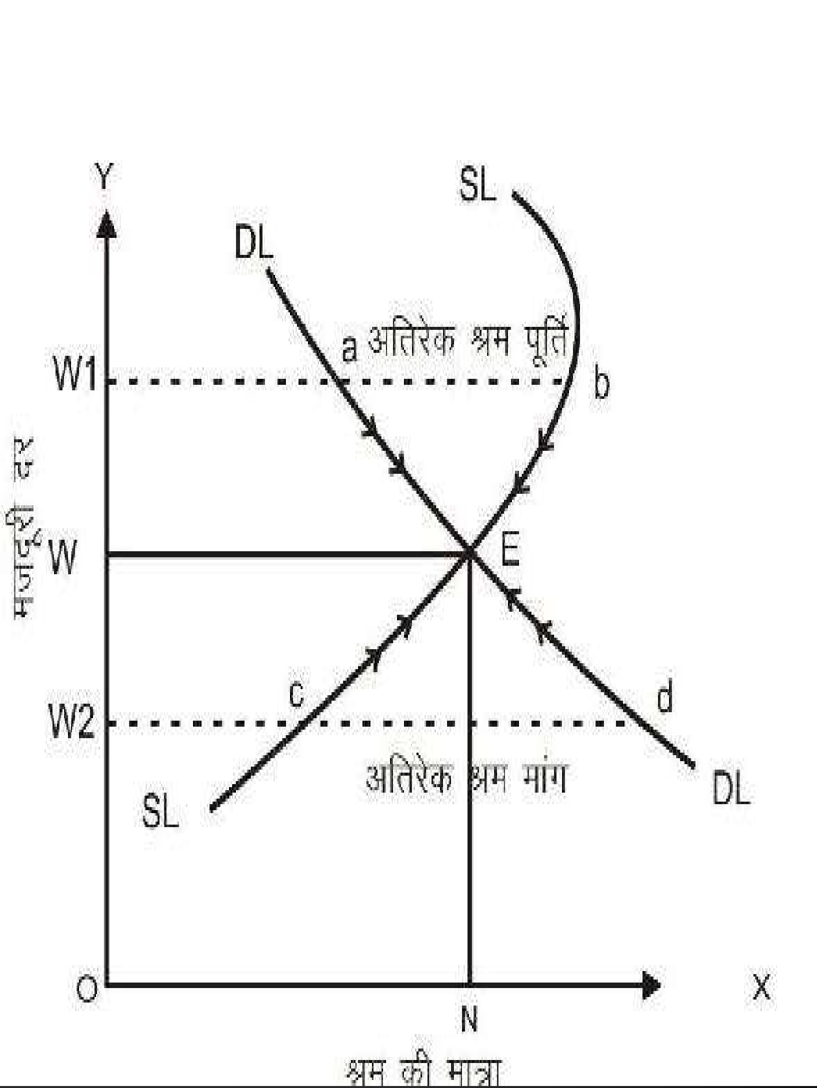

पूर्ण प्रतियोगिता में दी हुई मजदूरी के अन्तर्गत एक फर्म का सन्तुलन

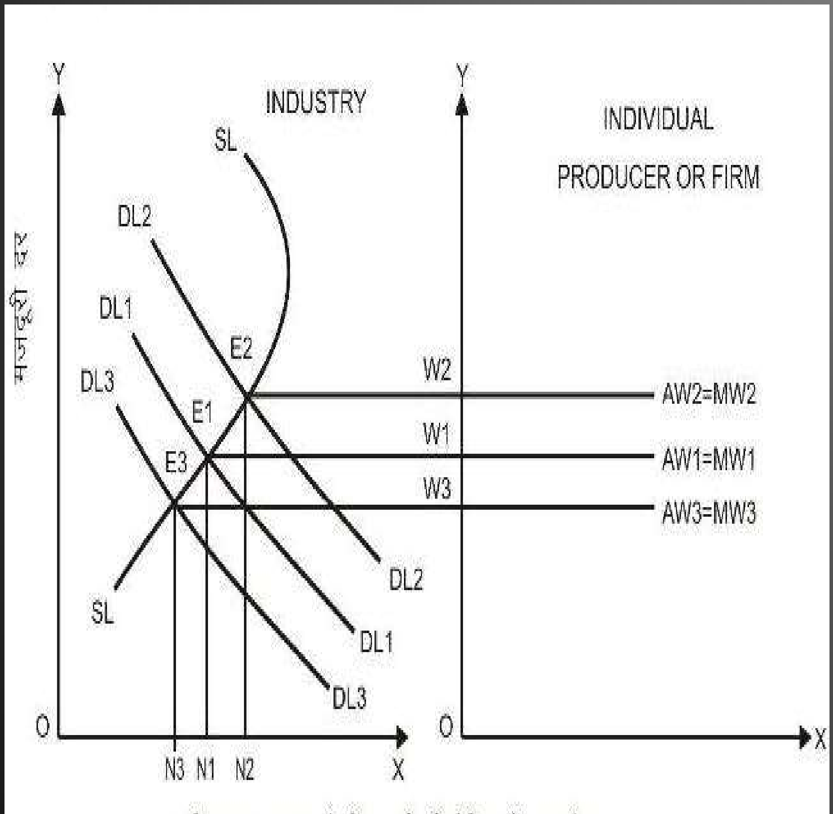

व्यक्तिगत उत्पादक के लिए पूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी

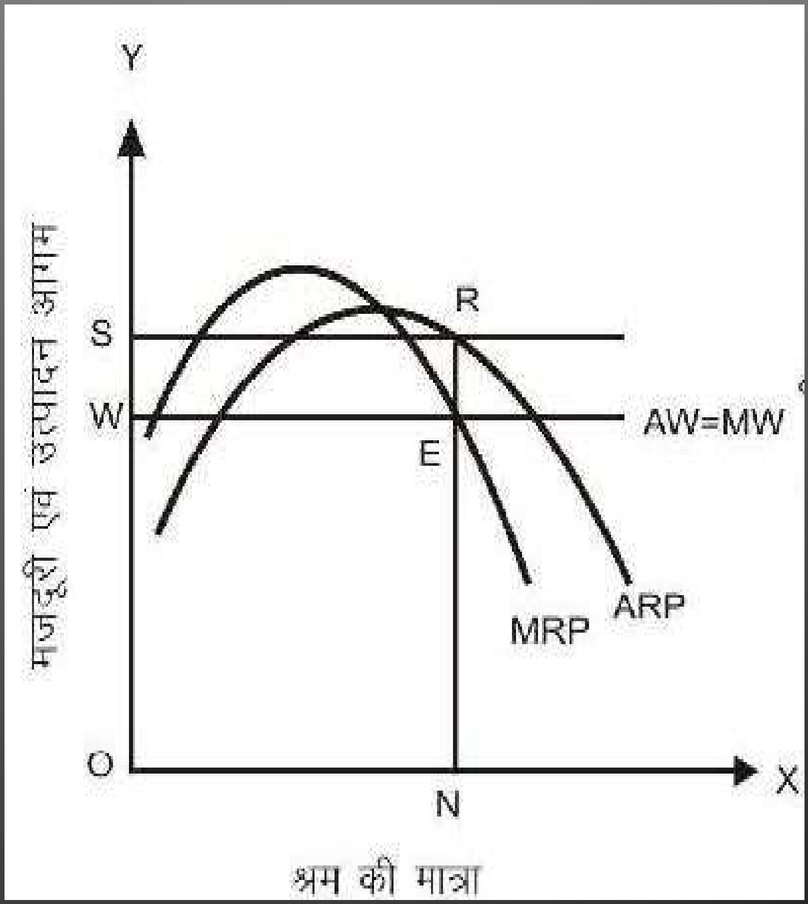

पूर्ण प्रतियोगिता में दी हुई मजदूरी के अन्तर्गत एक फर्म का सन्तुलन

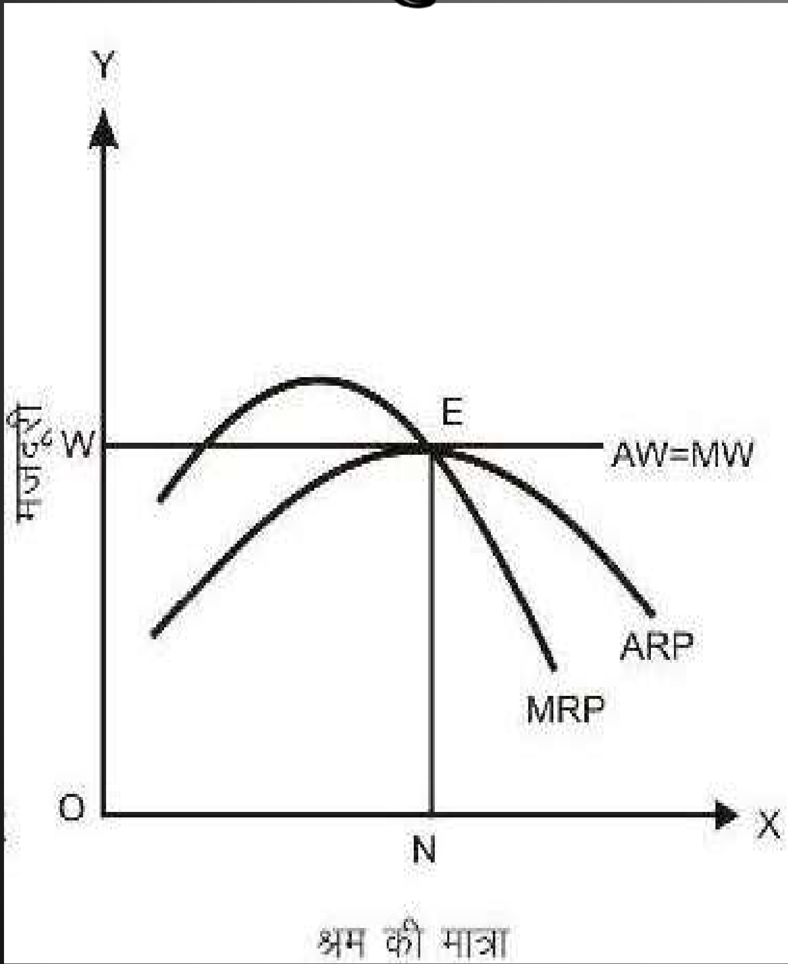

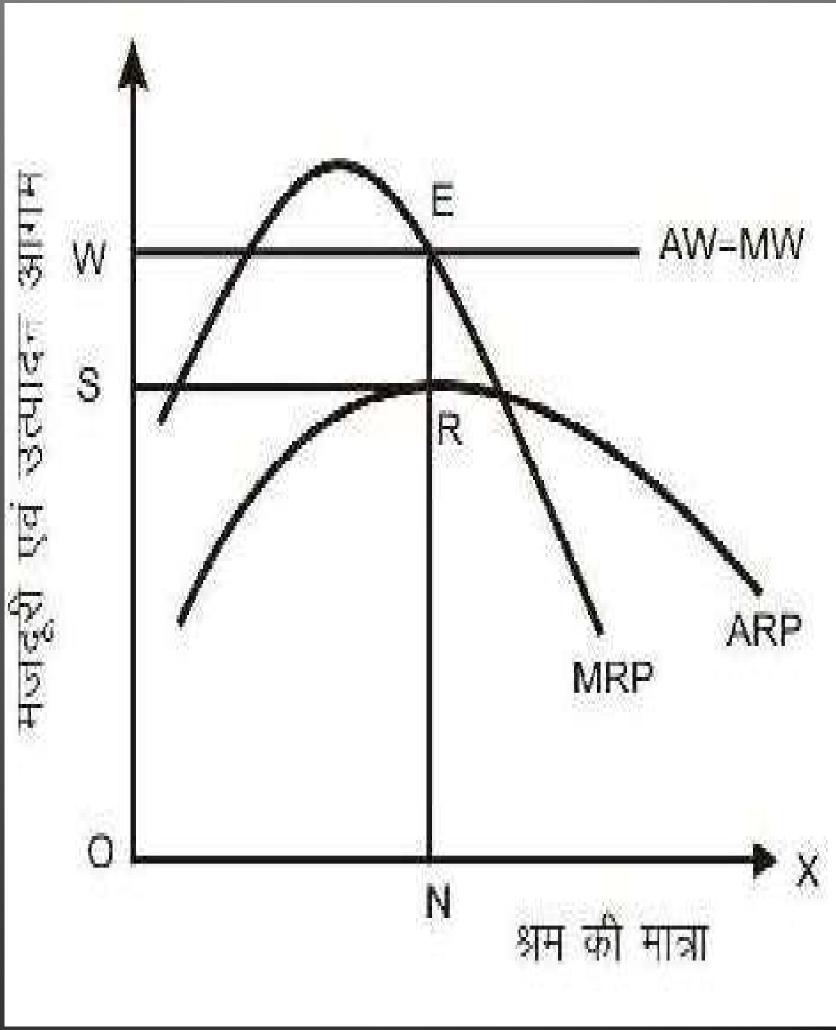

दीर्घकाल में श्रमिकों का प्रयोग

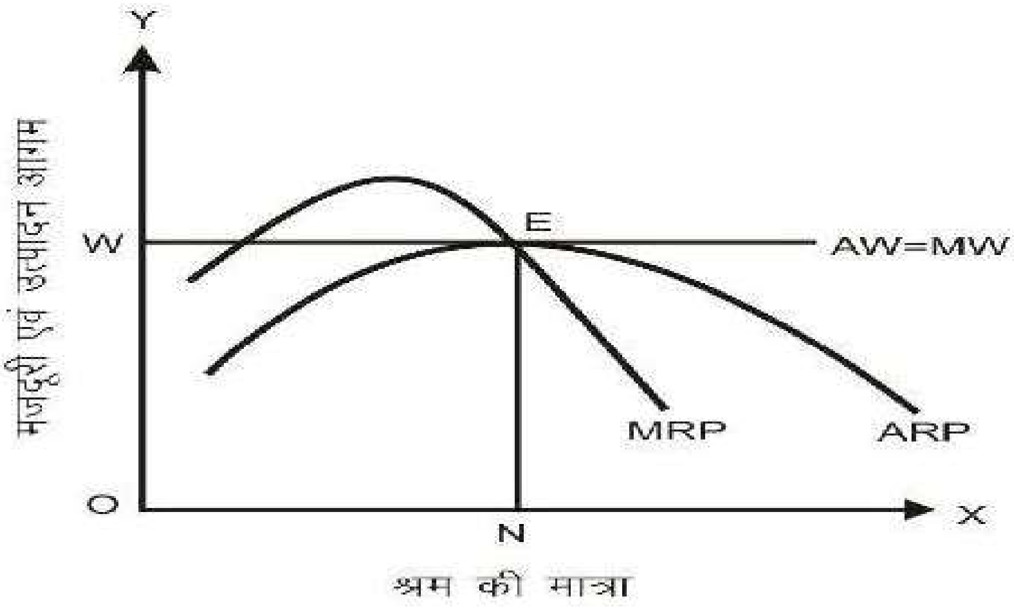

अपूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी का निर्धारण